

रचयिता-परिचय-कण

जन्मतिथि : ६ अगस्त, १९१५

माता का नाम :
स्व० श्रीमती रामराजी पाण्डेय

पिता का नाम :
स्व० पं० गोपालजी पाण्डेय

बालविवाहिता :
स्व० श्रीमती रोशनी पाण्डेय

युवापरिणीता :
स्व० श्रीमती चन्द्रावती पाण्डेय

जन्मस्थान : शाहपुरपट्टी, जिला-भोजपुर, (बिहार)

१. स्वाधीनता-संग्राम में : १९३० एवं १९४२ ई०, अनतः कारावास, पेन्शन-परित्याग ।

२. व्यवसाय : पत्रकारिता । प्रधान सम्पादक, दैनिक 'नवराष्ट्र' दैनिक 'विश्वमित्र' साप्ताहिक 'अग्रदूत', 'स्वदेश', 'नवीन बिहार', 'बिहार जीवन', मासिक 'पाटल' एवं 'बालक' ।

३. व्यवसायक्रम में कार्यक्षेत्र : कलकत्ता, काशी, कानपुर, पटना, भागलपुर ।

४ उच्चतम सम्मानोपाधि : 'साहित्यवाचस्पति', हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की उच्चतम सम्मानोपाधि ।

५. उच्चतम गैरसरकारी पद : अध्यक्ष, बिहार हिन्दी-साहित्य सम्मेलन (तीन बार), अध्यक्ष : बंग प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य सम्मेलन । वरिष्ठ उपाध्यक्ष, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग ।

६. उच्चतम सरकारी पद : बिहार सरकार की हिन्दी-समिति के द्वितीय (अंतिम) अध्यक्ष । प्रथम अध्यक्ष थे डॉ० लक्ष्मीनारायण 'सुधांशु' ।
प्रथम पूर्णकालिक अध्यक्ष : बिहार सरकार की हिन्दी प्रगति समिति । प्रथम अध्यक्ष : हिन्दी विधायी उपसमिति ।

७. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के प्रति बिहार-सरकार की उपेक्षानीति के विरोध में एकमात्र पदत्यागी निदेशक ।

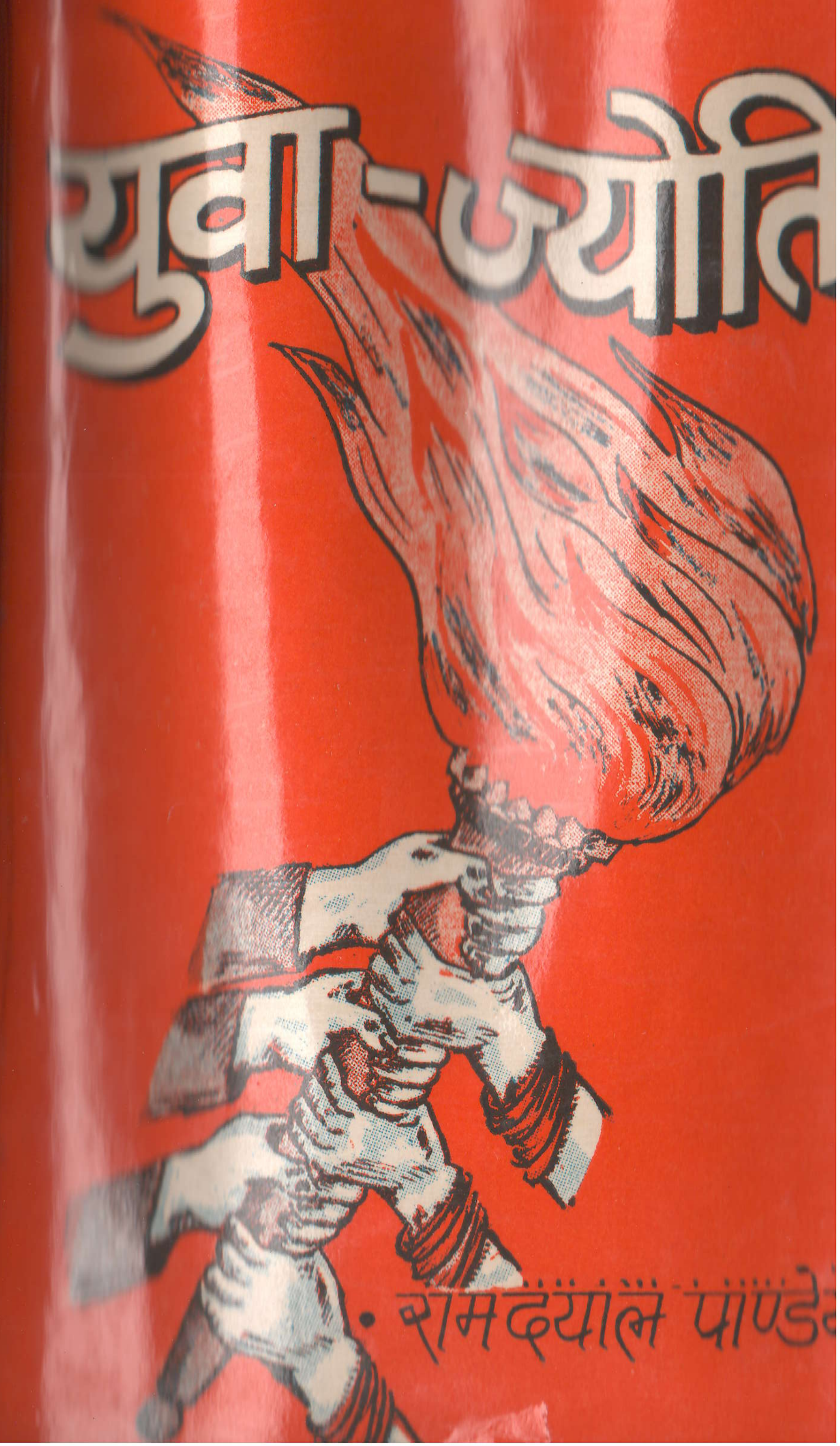
८. प्रकाशित काव्यकृतियाँ : १. 'गणदेवता (संग्रह), २. 'अशोक' (प्रबन्ध-काव्य), ३. 'शक्तिमयी' (काव्यचयनिका), ४ 'राष्ट्रव्यंजना' (काव्यचयनिका), ५. 'युगान्तर' (प्रयोगात्मक महाकाव्य), ६. 'लोकायन' (प्रयोगात्मक महाकाव्य) ७. 'युवाज्योति' (युवाशक्ति-काव्य, ६ सर्ग)।

९. प्रकाश्य 'नवोदय' (बालक-बालिकाओं के संदर्भ में ६ सर्ग)

१०. सम्भावित प्रकाशन : तीसरा प्रयोगात्मक महाकाव्य ।

पता 'देवगीत', आशियाना नगर, पटना–८०००१४ (बिहार)

युवा-ज्योति • रामदयाल पाण्डेय



युवाज्योति

(युवावर्गसम्बन्धी छह सर्ग)

●

रचयिता :

रामदयाल पाण्डेय

●

प्रकाशक :

पाण्डेय रचनावली प्रकाशन

'देवगीत', आशियाना नगर

पटना—८०००१४

प्रकाशक एवं प्राप्तिस्थान :
पाण्डेय रचनावली प्रकाशन
'देवगीत', आशियाना नगर
पटना—८०००१४

प्रथम संस्करण

प्रकाशन-वर्ष : १९९२ ई०

मूल्य : पैंसठ रुपये

मुद्रक :
न्यू साहनी प्रिंटिंग प्रेस
४/५६, राजेन्द्र नगर
पटना—८०००१६

स्मृति - तर्पण

कविवर बुद्धिनाथ झा 'कैरव'
कविवर रामेश्वर झा 'द्विनेन्द्र'
श्री राधाकृष्ण
श्री अनूपलाल मण्डल
प्रो० डॉ० देवराज उपाध्याय
आचार्य नलिनविलोचन शर्मा
कविवर रामगोपाल शर्मा 'रुद्र'
कविवर हरेन्द्रदेव नारायण
कविवर व्रजकिशोर नारायण
प्रो० डॉ० मंगलविहारी शरण
कविवर मदनलाल नकफोफा
कविवर पन्नालाल महतो 'हृदय'
कविवर नारायण लाल कटरियार
कविवर राजकमल चौधरी
कविवर रामनाथ पाठक 'प्रणयी'
कविवर रामचन्द्र भारद्वाज
कविवर रामप्रिय मिश्र 'लालधुआँ'
कविवर कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह

का
रामदयाल पाण्डेय
द्वारा
सादर ।

सस्नेह समर्पण

धर्मपुत्र चि० रामकैलाश मिश्र
धर्मपुत्रवधू सौ० राजेश्वरी मिश्र
एवं
धर्मपौत्र चि० कृष्णनन्दन मिश्र
ग्राम—लड़गामा, पो०—अगई
द्वारा
जोगियारा, जिला—मधुबनी
(बिहार राज्य)
को
शुभाशीषपूर्वक

—रामदयाल पाण्डेय

दो शब्द

तो नारीशक्ति-सम्बन्धी 'शक्तिमयी' से चलकर मेरी अभिनव प्रकाशन-यात्रा लोकशक्ति सम्बन्धी प्रयोगात्मक महाकाव्य 'लोकायन' तक पहुँची ही थी कि उन कर्त्तव्यचेतना-प्रेरित प्रकाशनों के अतिरिक्त इस युवाशक्ति-सम्बन्धी 'युवाज्योति' का प्रकाशन भी अनिवार्य कर्त्तव्य प्रतीत हुआ। अतः येनकेन प्रकारेण इसका प्रकाशन हो रहा है। अत्यन्त सीमित साधनों के ही कारण इसकी पृष्ठसंख्या भी अत्यन्त सीमित हो गई। एक अन्य काव्यकृति का प्रकाशन भी कर्त्तव्योचित अनिवार्यतः प्रतीत होता है। परन्तु उसके हेतु साधन सुलभ होने पर ही तो प्रकाशन सम्भव होगा। उसकी भी न्यूनतम पृष्ठसंख्या इतनी तो होगी ही। किन्तु अपने आशावादी स्वभाव के कारण मैं निराशा नहीं व्यक्त करता।

इस प्रकाशन को अत्यल्प समय में सम्भव करने पर मैं न्यू साहनी प्रिंटिंग प्रेस के संचालक श्री रामबालक प्रसाद एवं उनके सहयोगियों के प्रति कृतज्ञता और अपने समस्त शुभचिन्तकों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

बुधवार
तुलसी-सप्तमी (श्रावण शुक्ल)
२०४९ वि०
दिनांक ५ अगस्त, १९९२

रामदयाल पाण्डेय
'देवगीत,'
आशियाना नगर
पटना-८०००१४

सर्गानुक्रम

युवाज्योति

प्रथम सर्ग : सिंहावलोकन

तन में है भारी दुर्बलता;
चाहता, लिखूँ मैं काव्य सबल;
भारत के तरुण - तरुणियों में,
चाहता, भरूँ मैं ज्योति नवल।

तन तो मेरा अक्षम अवश्य,
किन्तु मनोबल तो अदम्य;
दे सकूँ आत्मबल लेश मात्र,
हो देश पूर्णतामय सुरम्य।

मैं चल पाता हूँ भले नहीं,
पर भारत को तो बढ़ना है;
क्रमशः चलते, आगे बढ़ते,
उच्चतम शिखर पर चढ़ना है।

यह शिखर अभ्युदय का हो चिर,
हो सतत प्रगति - निर्माणों का;
चिर शान्ति - शृंग हो और सदा
हो रचनात्मक अभियानों का।

भारत विशाल, भारत महान्,
यह सर्वोत्तम इतिहास - देश;
इसकी अवनति हो क्यों कदापि ?
क्यों हो इसको संहार - क्लेश ?

भारत को तो हम कहते हैं,
सादर - सभक्ति भारतमाता;
माता को क्लेश भला क्यों दें ?
हम क्या न बनें चिर सुखदाता ?

माता गरीयासी, महीयसी;
है स्वर्ग - कल्पना से बढ़कर;
क्या है अपना कर्त्तव्य नहीं,
चिर चलें राष्ट्रसेवा - पथ पर ?

यदि करें अरक्षित हम इसको,
तो क्या यह सेवा हो सकती ?
यदि करें कलुष क्षत करने का,
तो इसे न गंगा धो सकती।

माता को क्षत - विक्षत करना
क्या महापाप से कुछ भी कम ?
श्रम तो इसमें भी व्यय होता,
हम क्यों न करें रचनात्मक श्रम ?

यों ही खण्डिता हुई माता
जब घातक पाकिस्तान बना;
अपना स्वतंत्रता - दिवस नहीं
हम सके हर्ष के साथ मना।

भूलना नहीं बलिदान हमें
है स्वतंत्रता के वीरों का;
सर लिये हथेली पर दौड़े
जो, उन शहीद रणधीरों का।

दे दिया रक्त अपना समस्त
भारत के तनिक पसीने पर;
गोलियाँ पुष्पवत् ही मानीं
निज दृढ़संकल्पी सीने पर।

थे युवा, किन्तु थे महापुरुष,
युग - पुरुष उन्हें माना हमने;
वे अजर - अमर, वे चिर प्रणम्य;
कुछ को ही पहचाना हमने ।

वे भगत सिंह सरदार अभय,
वे ऊधम भी निर्भय महान्;
दे गये प्राण निज भारत को,
दे गये हमें नव स्वाभिमान ।

आजाद चन्द्रशेखर प्रवीर,
वे बोस महाशय खुदीराम;
अशफाक और बिस्मिल शायर;
बटुकेश्वर को भी है प्रणाम ।

सन अट्ठारह सौ सत्तावन,
मंगल पाण्डेय बढ़े आगे;
फिर कुँअर सिंह औ' पीर अली,
कुल देशभक्त क्रमशः जागे ।

रानी लक्ष्मी बाई दौड़ीं,
दौड़े थे नाना फड़नवीस;
तात्या टोपे दौड़े लड़ने;
जागे जनगण कुल कोटि बीस ।

थीं बढ़ीं राष्ट्र के संगर में
वे हजरत महल स्वदेश - भक्त;
बढ़ चले बहादुर शाह जफर,
रण नहीं देश का हो अशक्त ।

कण - कण जागा, जन - जन जागा,
लेकर स्वतंत्रता रण - भेरी;
थी कहाँ तनिक भी धन - चिन्ता ?
कुछ नहीं त्याग में की देरी ।

फिर आये बनकर लोकमान्य
वे तिलक महोदय प्रतिभामय;
पंजाब - केसरी भी जागे;
वर मालवीय जी गरिमामय ।

आये महान् अरविन्द घोष
लेकर विप्लव का शंखनाद;
हो गया एक था कुल भारत;
लेकर अनुशासन निर्विवाद।

दृढ़ रासबिहारी बोस और
बढ़ चले चित्तरंजन सुवीर,
बापू आये लेकर सुमंत्र,
ले सत्य - अहिंसा - शक्ति धीर।

आये मजहरुल, इमाम बन्धु,
वे अली बन्धु भी गतिशाली;
गोपालाचारी राज लिये
कुल दक्षिण भारत मतिशाली।

नेहरू लाल मोती आये
निज लिये जवाहर लाल सुअन;
वल्लभ भाई, राजेन्द्र वीर,
आजाद कलाम अबुल पावन।

बढ़ चला अदंय लेकर उत्कल,
था संग - संग चल रहा असम;
आग्नेय देश था हुआ अखिल,
था देशभक्ति का बल निभ्रंम।

हो गया जालियाँ बाग काण्ड,
क्या स्वतंत्रता - रण हुआ दमित ?
चल पड़ा देश पूरा पथ पर,
कर सका दमन था किसे भ्रमित ?

यह मार्ग देश - गौरव का था,
पथ स्वतंत्रता के रण का था;
भारतमाता की रक्षा का;
कुल भारत के जीवन का था।

कर पर थे सारे जनमस्तक,
बढ़ चले ओढ़कर कफन सभी;
यों ही क्या देश विमुक्त हुआ ?
तब हुआ, एक जन हुए जभी।

आह्वान हुआ था बापू का,
कर दो स्वतंत्र भारत सत्वर;
या मरो, मर मिटो सब तत्क्षण;
क्या जीना पराधीन रहकर ?

परवाह नहीं थी फाँसी की,
जाने - कितने बलिदान हुए;
लाखों जन जेलों में बन्दी
बरसों तक रह, बेजान हुए।

माँ - बहनें भी थीं संग चलीं,
माँ बा कस्तूर कि सरोजिनी;
कमला कि विजयलक्ष्मी पण्डित,
सर्वत्र बढ़ी थीं माँ - भगिनी।

माताओं का था त्याग विरल,
कर दिये लाल निज न्योछावर;
थे दिये सुहाग युवतियों ने;
दौड़ी थी कैसी तेज लहर।

माँ - बहनों की अस्मत की भी
की फिरंगियों ने लूट घोर,
बच्चों के सर थे काट दिये,
भीषण नृशंसता की अथोर।

था रुदन और कुहराम मचा,
पर कहीं न कोई था विचलित;
सब सहन किया हँसते - हँसते,
भारत की जय चिर हुई ध्वनित।

थे ग्राम जले, घर - बार जले,
था अग्निकाण्ड अतिशय भीषण;
चाहे सर्वस्व जला, न जला
उन युवक - युवतियों का दृढ़ प्रण।

तुम मुझे खून दो, मैं दूँगा,
तुमको भारत की आजादी,
बोले जब नेताजी सुभाष,
दौड़ी तरुणों की आबादी।

आजाद हिन्द सेना ने तब
रण किया देश के बाहर भी;
घबड़ाई बर्बर ब्रिटिश शक्ति,
रह सकी अभय क्या पल भर भी ?

बर्मा, जापान आदि में भी
रणभेरी बजी प्रबलतम थी;
सहगल, नवाज, महबूब बने
लक्ष्मी की दृढ़ता अनुपम थी।

थे निकले भीषण कारा से
दीवार फाँदकर जय - प्रकाश;
मिल गई फरारों की सेना,
संगर में आया फिर हुलास।

हो गिरफ्तार लाहौर गये,
था जेलसेल का घोर कष्ट;
वे गये लिटाये बर्फ आदि
पर, जिससे हो जीवन विनष्ट।

सर्वत्र दमन का ताण्डव था,
हो गये तरुण कितने शहीद,
दन - दन गोलियाँ चलीं, डूबीं
शोणित में होली और ईद।

हिल उठा अखिल भूमण्डल था,
पर देशभक्त - दल हिला नहीं,
कोई भी देशद्रोही जन
था फिरंगियों को मिला नहीं।

क्या वह इतिहास मिटाना है?
हमको फिर उसे जगाना है;
विघटनकारी जो आते हैं
बाहर से, उन्हें भगाना है।

है मुझे गर्व; मैं भी तो उस
रण का विनम्र लघु सैनिक था;
परवाह नहीं थी परिजन की;
कर्तव्य पूर्णतः नैतिक था।

विप्लवी बना, फिर हो फरार,
झेलने पड़े थे कष्ट अमित;
फिर गया जेल; जब मुक्त हुआ
तो मन मेरा हो गया व्यथित।

क्या मूल्य भला कुछ लेना है ?
जो कुछ सम्भव है, देता हूँ;
लिखता, देता हूँ मुद्रण - व्यय;
नौका मैं दुख से खेता हूँ।

क्या है यदि साधन पास नहीं ?
क्या है यदि तन जर्जर - दुर्बल?
सर्वदा रहे निज देशभक्ति
अक्षुण्ण, यही मेरा सम्बल।

उत्तराधिकारी हम किनके ?
पथ - भ्रष्ट बनेंगे भला आज ?
हमको रचना है भारत में
नव शान्तिपूर्ण सुखमय समाज।

रखना अखण्ड है भारत को,
जो बचा, न उसको छिन्न करें;
हम क्या न देश में ऐक्य भरें ?
क्या नहीं प्रेम की शक्ति भरें ?

कोशिश हो यही कि भारत को
हम नहीं विभाजित रहने दें,
भारत में बहन - भाइयों का
हम रक्त न कण भर बहने दें।

जो हुआ विभाजन स्वतंत्रता
के पूर्व, नहीं वह हुआ सुखद;
हम काश मिटा पाते उसको,
होता अवश्य नवजीवन - प्रद।

खण्डित को क्या खण्डित करना ?
इसको अक्षुण्ण बनाना है,
चिर युवाशक्ति को ही भारत
का बल - ऐश्वर्य बढ़ाना है।

सच है, असंख्य बलिदानों से
ही तो स्वतंत्रता आती है;
यदि जागरूक हों युवा नहीं,
तो आकर भी छिन जाती है।

इतिहास विश्व का साक्षी है,
कितने स्वतंत्र फिर दास हुए;
फिर बलिदानों का दौर चला,
जन कितनी बार निराश हुए!

भारत के अन्तिम स्वतंत्रता—
रण को रखना है सदा स्मरण;
एकता - शक्ति रखनी होगी;
अन्यथा मिलेगा फिर बन्धन?

क्या समाधान दे सकते हैं
आतंकवाद? पार्थक्यवाद?
चिर शान्ति - एकता से ही तो
सुलझेंगे निज सारे विवाद।

यह भूल न जायें, भारत ही
चिर काल शान्ति - सुखदाता है;
सारे जग में चाहे जो हो,
सर्वोत्तम भारत माता है।

●

द्वितीय सर्ग : युवाशंख

चलो युवाओ! चलना अच्छा;
किन्तु चलो तुम दृष्टि खोलकर;
नहीं राष्ट्र - उद्यान उजाड़ो;
इसे शक्ति दो कर सुन्दरतर।

किसी देश का तुम्हें भला क्या
अन्ध अनुकरण करना वांछित?
सोचो शुभचिन्तक भारत के,
शुभचिन्तन ही चिर आकांक्षित।

अन्य देश क्या शिक्षा देंगे?
तुम प्रबुद्ध चैतन्य तरुण हो;
महातिमिर में क्यों भटकोगे?
लघु भी हो तो बाल अरुण हो।

भारतमाता की सन्तति हो;
तुम भारत के संरक्षक हो;
कर्मयोगमय, ज्योतिर्मय हो;
नहीं राष्ट्र के विध्वंसक हो।

कैसा भी हो शत्रु देश का
तुम उसको परास्त कर दोगे;
क्या प्रतिशोध राष्ट्र से लेना ?
रिपुओं से ही तो तुम लोगे ?

मैं मानता कि तुम में ज्वाला
है अपार, तुम ज्वालामय हो;
पर निज सदन जलाओगे क्या ?
लड़ो राष्ट्र - रिपु से निर्भय हो ।

ऐसे तरुणों का ही पूजक
रहा सदा इतिहास हमारा;
दो भारत को शक्ति विजयिनी;
हो सदैव जयगान तुम्हारा ।

इसमें क्या सन्देह कि भारत
तुम्हें अपरिमित धन - बल देगा ?
सत्ता - स्वत्व अखिल दे देगा;
चिर जीवन, चिर यौवन देगा ।

नवरचना को वेला है यह,
मिलजुल कर निर्माण करो तुम;
शक्ति - कलश है रिक्त राष्ट्र - का,
इसमें अभिनव शक्ति भरो तुम ।

तुम ज्वाला प्रलयंकर हो यदि,
तो शुभ शान्ति - हिमालय भी हो;
शीतल मानसरोवर भी हो,
तुम निर्माण - शिवालय भी हो ।

तुम सागर पर सेतु बनाकर
किसी देश में जा सकते हो;
कर सकते हो पार हिमालय,
रिपु को धूल चटा सकते हो ।

विजय देश को दे सकते हो;
सीमाएँ क्यों रहें अरक्षित ?
जागरूक प्रहरी - सैनिक हो;
कर सकते हो राष्ट्र सुरक्षित ।

तुम्हीं देश का नव भविष्य हो;
तुम्हीं राष्ट्र के कर्णधार हो;
सतत सन्तुलित - अनुशासित रह,
कर सकते सारे सुधार हो।

भले आज के तुम अनुगामी,
किन्तु तुम्हीं हो कल के नेता,
कर्मयोग, उन्नत चरित्र से
बन सकते हो राष्ट्र - प्रणेता।

जिसे ध्वस्त कर देते हैं हम
वह कैसे सुख - साधन देगा ?
ध्वंस - राग जो नर गाता हो,
शान्ति - सुधा वह कैसे लेगा ?

सुख रहता है निर्माणों में,
साधन की रक्षा में रहता;
रहता है साधन - विकास में,
मनुज अन्यथा चिर दुख सहता।

अमित व्यथा होती ध्वंसों से
देशभक्ति के अन्तस्तल में;
लोकतंत्र का पथ अपनाओ;
धरा भला क्या उथल - पुथल में ?

विघटन से तो घटना ही हैं;
कभी राष्ट्र क्या है बढ़ सकता ?
नाश - पंथ पर चलकर मानव
क्या सुख - शृंगों पर चढ़ सकता ?

क्या अपहरण भला कुछ देगा ?
क्या कुछ दे सकती नृशंसता ?
अमानुषिकतामय कृत्यों से
क्या मिलती - बढ़ती जनसत्ता ?

लूटपाट से, हत्याओं से
कितने सुख - साधन पाओगे ?
इनसे तो दुख के पथ पर ही
तुम क्रमशः बढ़ते जाओगे।

क्या भीषण आतंकवाद से
कभी समस्या हल होती है?
यह तो पथ है सर्वनाश का,
दुखिया माँ - बहनें रोती हैं।

हत्या से क्या मिलने वाला ?
कितनों की हत्या कर सकते ?
इसी मार्ग से भला नहीं क्या
तुम हत हो सकते, मर सकते ?

तृषा कभी क्या बुझ सकती है
रक्त निरीहों का पीने से ?
इससे तो मरना श्रेयस्कर,
क्या शंसा ऐसे जीने से ?

'जियो और जीने दो' पथ से
ही तो भारत हुआ समुन्नत;
सहिष्णुता, सहयोग, समन्वय
का ही तो होता पावन व्रत !

फैलाते सम्पूर्ण देश में
क्यों यह सर्वनाश की ज्वाला ?
चिर अशान्तिमय पथ यह भीषण;
क्या गौरव है मिलनेवाला ?

नाम कलंकित ही होता है;
होती हैं माँ - बहनें लांछित;
लांछित करते नाम पिता का;
होता है इतिहास कलंकित ।

क्या सुख या गौरव पाओगे
यदि भारत ही मिट जायेगा ?
जड़ पार्थक्यवाद का क्रम क्या
बल अखण्डतामय लायेगा ?

बल तो रहता अखण्डता में
सदा एकता में है रहता;
कौन तुम्हें सिखलाता विघटन ?
भारत से लड़ने को कहता ?

कौन प्रशिक्षण देता तुमको ?
समझो, उसकी घृणित चाल को;
माला बता तुम्हें पहनाता,
फेंको ऐसे महाव्याल को।

नहीं वीर कहला सकते हो;
कायर ही चिर कहलाओगे;
देशद्रोही की संज्ञा से
सदा भर्त्सना ही पाओगे।

पाप गुप्त यह क्या रह सकता ?
एक दिवस तो पोल खुलेगी;
होगा अखिल रहस्योद्घाटन;
क्या दुष्कृति कुछ गरिमा देगी ?

रुको, रुको, सोचो - समझौ कुछ;
सद्विवेक का दीप जलाओ;
निकलो भीषण अन्धकार से,
ज्ञानज्योति के पथ पर आओ।

भारत के अरि गरज रहे जब,
तुमको करना सिंहनाद है;
जड़ आतंकवाद भारत के
कण - कण में भरता बिषाद है।

तुम स्वदेश के सुत प्रवीर हो;
क्या तुमको होना अधीर है ?
पोंछो भारत के नयनों में
उमड़ रहा जो दुःख - नीर है।

क्या आतंकवाद हो सकता
है भारत का जीवन - दर्शन ?
तुम नवयुग के वीर शिवाजी;
नव प्रताप राणा हो पावन।

बनो देश के संरक्षक तुम,
सदा तुम्हारा यशोगान हो,
मुक्त क्षुद्रताओं से सारी,
तुम गुण - गरिमा के निधान हो ?

भारत - स्वतंत्रता के ध्वज को
रखना है जग में सर्वोन्नत;
रक्त शहीदों का है तुममें;
देशभक्ति रखनी है अक्षत।

स्वतंत्रता के गिरि - शिखरों की
ज्योति भूमि पर लानी होगी;
अभिनव बलिदानों की ज्वाला
तुमको सदा जगानी होगी।

इसमें क्या सन्देह कि इससे
तुम गौरवमय अमर बनोगे?
स्वतंत्रता का समर शेष जो,
उसके सैनिक प्रखर बनोगे।

जागो, जागो हे पौरुषमय!
जागो देशभक्तगण सारे;
भारत को जय देनेवाले,
जागो हे आँखों के तारे।

चरम लक्ष्य रहता सुदूर है;
अतः निरन्तर चलना होगा;
ज्यों प्रकाश के हेतु दीप को
पल - पल, तिल - तिल जलना होगा।

'चरैवेति', चिर 'चरैवेति' ही
है जीवन - सन्देश हमारा;
'मा मैः, मा मैः,' निर्भयतामय
बजे हमारा युद्ध - नगाड़ा।

भला देश के अरियों के क्या
हम कदापि सैनिक बन सकते?
प्रति क्षण भारत की प्रतिरक्षा
करने में हम कभी न थकते।

यदि आक्रमण करेगा कोई
तो हम प्रत्याक्रमण करेंगे;
नहीं विलम्ब करेंगे पल भर,
विजय देश को प्रति पल देंगे।

कण भर भूमि न लेने देंगे,
कुल भारत अक्षुण्ण रहेगा,
यदि ऐसा हम नहीं करेंगे,
हमें कापुरुष विश्व कहेगा।

किसी मनुज पर निज भारत के,
भला आक्रमण क्या करना है ?
नहीं शौर्य है, कायरता है;
देशद्रोही बन मरना है।

बढ़ो अखिल तरुणो भारत के,
रहो सजग चिर सीमाओं पर;
जागरूकता ही स्वतंत्रता,
बलिदानी होते अविनश्वर।

छद्म रूप में भी आ-आकर
कोई अहित न करने पाये,
घुसपैठिये शत्रु ही होते,
उनको क्या हम कभी बचायें ?

वे देते हैं सदा प्रलोभन,
चलने दें क्यों उनकी माया ?
उसका दें अस्तित्व मिटा हम,
जो हो छलिया बनकर आया।

शत्रु सदा छलिया होते हैं,
उनसे रहना सावधान है;
दण्डित करना ही है सत्वर,
कभी न देना क्षमादान है।

भारत की यदि भूमि किसीने
कण भर भी, कैसी भी ली हो,
उसे छीन लें, करें हस्तगत,
रहे अनुर्वर या गीली हो।

भारतमाता अपनी पावन,
इसके कण-कण में पावनता;
शत्रु अपावन क्यों कर पायें ?
करें दमित उनकी मदान्धता।

शत्रु के लिए महाशत्रु हम;
मित्रों के हैं मित्र परम हम;
हैं अशान्ति के चरम विरोधी,
सदा दिखाते निज बल - विक्रम।

बढ़ते जो सुरसा समान हों,
उनके हम अलंघ्य अवरोधक;
जो हैं आँख दिखाते हमको,
उनके हम सत्वर प्रतिशोधक।

भूल - भटक जो गये हमारे
तरुण, सम्हल जायें पल भर में;
देशभक्ति के पथ पर आयें;
जागे देशभक्ति घर - घर में।

कण - कण में चिर देशभक्ति है,
कण - कण सदा बचायेंगे हम;
भारतमाता के चरणों पर
मस्तक स्वयं चढ़ायेंगे हम।

भटके हैं कुछ ही तरुण अभी,
हैं सभी नहीं पथ - भ्रान्त हुए;
दिग्भ्रमित सदा को हुए नहीं;
कुछ पल के लिए अशान्त हुए।

जो हुए असंयत - उच्छृंखल,
वे कल अवश्य होंगे सयत;
होंगे अनुशासित वे भी तो,
लेंगे नवनिर्माणों का व्रत।

पर कुछ के ही दुष्कृत्यों से
अपयश पाता है वर्ग अखिल;
जैसे थोड़े - से जल से ही
हो जाता सारा पथ पंकिल।

कुछ का भी गिरना है घातक,
फल का सड़ना घातक होता;
क्रमशः सड़ाँध बढ़ती जाती;
सड़ना है संक्रामक होता।

संघर्ष अपेक्षित यदि हो तो
जड़ कुरीतियों से क्यों न लड़ें ?
संघर्ष रूढ़ियों से कर के,
सब उन्हें हटा दें, नष्ट करें ।

सब लड़ें अन्धविश्वासों से;
संघर्स करें भटकावों से;
विजयी होना है त्वरित उन्हें,
लड़कर समस्त दुर्भावों से ।

कितनी व्यापक है निष्क्रियता;
कितनी है घोर निरक्षता;
बंजरता अभी महाव्यापक,
लानी है व्यापक उर्वरता ।

है कभी नहीं होना निराश,
आशा की ज्योति जगानी है;
करना पौरुष को रचनात्मक;
नव विभा राष्ट्र में लानी है ।

ऊर्जा अपार है तरुणों में;
उसका अवश्य वे दें परिचय;
वे लड़ें राष्ट्र के रिपुओं से;
कर दें भारत को निःसंशय ।

करते प्रवेश जा चोरी से
भारत - सोमाओं के भीतर,
वे गुप्तचरी करने आते;
तरुणों को भटकाते आकर ।

कामिनी और कंचन का भी
वे घृणित प्रलोभन लाते हैं;
जो देशभक्त हैं युवा उन्हें
वे देशद्रोह सिखाते हैं ।

ले जाकर अपनी सीमा में
वे यही प्रशिक्षण देते हैं;
'भारतमाता को नष्ट करो;'
वे देशभक्ति हर लेते हैं ।

पर क्या भारत के वीर युवा
कुछ ऐसे कच्चे धागे हैं,
जो आत्मसमर्पण कर देते
ऐसे रिपुओं के आगे हैं ?

अपनी प्रवीरता के कारण
विख्यात रहे हैं जो जग में,
क्या वे भटकेंगे इसी भाँति
भीषण कायरता के मग में ?

क्या नहीं आत्मचिन्तन कुछ भी
वे जागरूक हो कर सकते ?
कर सकते नहीं हृदय - मन्थन ?
चेतना नहीं कुछ भर सकते ?

मैं नहीं निराश कभी होता;
इसलिए निवेदन करता हूँ;
देता कोई उपदेश नहीं;
ध्यानाकर्षण ही करता हूँ ।

तृतीय सर्ग : आत्मबोध

है नहीं नाम में आत्मबोध:
क्या सम्प्रदाय बोधक होता ?
बोधक होती है जाति नहीं,
है क्षेत्र कहाँ द्योतक होता ?

सन्निहित मनुज का है रहता
निज देश - राष्ट्र में आत्मबोध;
त्यों संस्कृति औ' इतिहास मिले
हमको कैसे, हो स्मरण - शोध ।

जिस पुण्यभूमि के वासी हम,
उसकी विशिष्ट गरिमा कैसी ?
उत्तराधिकारी हम जिनके,
उन पुरुषों की महिमा कैसी ?

वासी विशाल भारत के हम;
है भारतीय संस्कृति अपनी;
उत्तराधिकारी हम उनके,
कहती महान् जिनको अवनी ।

इतिहास बताता है हमको,
है शान्ति - प्रीतिमय रहा देश;
चिर सत्य - न्याय का संरक्षक;
है दिया किसी को नहीं क्लेश।

सौन्दर्य विविधता में इसका;
है शक्ति एकता में अजेय;
चिर उदारता औ' सहिष्णुता;
उच्चतर प्रेम से रहा श्रेय।

थी रक्षणीय चिर नैतिकता;
है मनुज मूल्य - रक्षक भारत;
वीरता, अहिंसा, करुणा का
सर्वदा रहा है पावन व्रत।

दर्शन उदार सर्वदा रहा;
सुपुनीत सदा जीवन-दर्शन;
अपनी असीमता - व्यापकता
से दिया विश्व को आकर्षण।

जो बना विश्व का संरक्षक,
वह अपनी रक्षा क्यों न करे?
क्या करे राष्ट्र का वह विनाश?
क्या नहीं हृदय में प्रेम भरे?

क्या भला मिटा दे भाई को?
क्या माँ - बहनों को करे व्यथित?
वसुधा - कुटुम्बता - संग सदा
भारत - कुटुम्बता हो रक्षित।

हिन्दू, मुसलिम, सिख, ईसाई
क्या नहीं रहें बनकर भाई?
जातियाँ परस्पर मिल - जुल कर
दें भारत को चिर तरुणाई।

वे लड़ें परस्पर क्यों कदापि?
अपने गृह में यों करें फूट?
गृह - कलह मचाने को सत्वर
क्या नहीं मचाते शत्रु लूट?

गृहयुद्ध घोर बन जाता है;
गृहकलह नहीं है मात्र कलह;
फिर महाकठिन होता विराम;
क्रमशः होता जाता दुस्सह।

हो जाता है अवरोध कठिन;
प्रतरोध महादुष्कर होता;
फिर शताब्दियों तक निखिल राष्ट्र
होकर दासत्व - बद्ध रोता।

शत - शत खण्डों में बँटा देश
दुष्कर चेष्टा से हुआ एक;
थे धन्य - धन्य वल्लभ भाई;
कर सके एक देकर विवेक।

क्या नहीं चाहिए हम रक्षा
करते जायें हो जागरूक ?
क्या जातिवाद ? क्या सम्प्रदाय
फिर करें देश को टूक - टूक ?

एकत्ववाद के अग्रदूत
हम रहे नहीं क्या भूतल में ?
फिर क्यों होंगे हम छिन्न - भिन्न ?
क्यों हों निमग्न हम दलदल में ?

यों ही भीषण पदलिप्सा ने
हैं किये देश में दल अनेक;
पर क्या न राष्ट्ररक्षा - हित के
पहलू पर हम हो जायँ एक ?

सीधासादा है प्रश्न यहाँ;
है नहीं काव्यगत अलंकार;
क्या नहीं देश के हेतु सभी
त्यागें अपने जड़ अहंकार ?

बाहर यदि सेतु बना सकते,
यदि बाँध सके थे हम सागर,
क्या नहीं बाँध सकते निज को
कर राष्ट्र - एकता को दृढ़तर ?

है अभी अमित करना विकास;
क्यों करें शक्ति का व्यर्थ ह्रास ?
एकत्व - शक्ति यदि नहीं रहे
तो ध्रुव होगा ही सर्वनाश।

अनुभव कहता है, गिरने से
हम हुए अधिकतम क्षत - विक्षत;
फिर पतन - गर्त्त में क्यों कूदें ?
फिर क्यों विनष्ट हो निज भारत ?

करता हूँ स्मरण कि भारत का
था युवावर्ग कितना महान्;
अनुलोकन - अनुचिन्तन करता,
था अनुपमेय यह महाप्राण।

सत्कर्म - पथों पर लहराता
था इसका ध्वज ले कीर्त्तिमान,
गाते थे भू, नभ, दिग्दिगन्त
उन मनस्वियों के विजय - गान।

उत्तराधिकारी तुम उनके,
प्रतिभा - मेधा के महापुंज,
हे महाबली ! हे कर्मवीर !
क्यों आज लग रहे लुंजपुंज ?

मानता कि है स्थायित्व नहीं
इस भीषण दोषग्रस्तता का;
मानता कि होगा शीघ्र अन्त
इस भ्रान्ति, प्रमाद, विवशता का।

क्या रह सकते इस कारा में ?
इस अन्धकारमय गह्वर में ?
तुम रवि हो, चमकोगे अवश्य
देदीप्यमान बन अम्बर में।

मैं नहीं निराश कभी होता;
लाओगे वैभव आशा का;
भारत - संस्कृति जानती नहीं
है नाम कदापि हताशा का।

मानता कि तुम इस भाँति नहीं
रहनेवाले हो द्विधाग्रस्त;
मेघों की दुरभिसन्धि पल भर;
वह कर सकती क्या तुम्हें पस्त ?

हे झंझानिल - अलमस्त ! उठो
है बुला रहा तुमको प्रकर्ष;
अभियान - ज्योति ले बढ़े चलो;
अभिनन्दन दे नवयुग सहर्ष।

तुम नहीं किसी युग के बन्दी;
निज युग के निर्माता हो तुम;
युगपुरुष बनोगे तुम अवश्य;
दोगे निज युग का शुभ कुमकुम।

भारत को दोगे नव गरिमा;
दोगे ज्योतिर्मय नव विहान;
बन सकते विश्व - गगन के तुम
मानव - मयंक, नर - विवस्वान।

वसुधा के सृजन - यज्ञ में तुम
दोगे चिर पावनतम हविष्य;
हीरक - मणि से भी मूल्यवान्
रच सकते भारत का भविष्य।

यदि किंकर्त्तव्यविमूढ़ रहे,
तो कहाँ मिलेगा दिशा - ज्ञान ?
तुम निज ध्रुवतारक बनो स्वयं;
रच दो नवरचना का विधान।

रवि - ताप करे क्यों तुम्हें शिथिल ?
तुम स्वयं सूर्य शीतलच्छाय;
सन्धान करोगे ही अवश्य
बाधा जित करने का उपाय।

भारत - संस्कृति है विश्वकोश,
सन्निहित जहाँ कुल समाधान;
है नहीं समस्या रह पाती,
जब मिल जाता है पन्थ - ज्ञान।

चिर भारतभक्ति रहे उर में;
भारत के हित का रहे ध्यान;
सारे समाज की सुखचिन्ता
से ही कर सकते कुल निदान।

हो जाति भिन्न, हो सम्प्रदाय
भी भिन्न, करें क्यों भेदभाव ?
टकराव कभी क्या करें, और
क्यों हो कदापि कोई दुराव ?

शिक्षित जन का कर्त्तव्य महत्
है, करें निरक्षरता समाप्त;
अज्ञान - तिमिर जिसके कारण
है निखिल देश में हुआ व्याप्त।

इससे उत्पन्न हुआ व्यापक
क्या नहीं अन्धविश्वास घोर ?
रूढ़ियाँ हो गईं घनीभूत;
मिलता न कहीं है ओरछोर।

जो अस्पृश्यता गहनतम थी,
उसका तो कुछ हो गया अन्त;
भीषण कुरीतियों की कारा
में बन्दीबत् हैं दिग्दिगन्त।

दानव दहेज का अति भीषण;
इस हेतु हो रहे वधूदाह;
श्राद्धादि घोर हैं पौराणिक;
लगता अबाध - सा यह प्रवाह।

है घोर अपव्यय भी दानव,
जो दिखलाता मिथ्याभिमान;
इससे बढ़ती है निर्धनता
प्रति दिन सुरसा - मुख के समान।

क्या नहीं अपेक्षित है सुधार ?
क्या नहीं नियंत्रण है वांछित ?
कुल कुरीतियों को करना है
क्या नहीं त्वरित ही उन्मूलित ?

जड़ जाति - पाँति की विभीषिका,
अति घोर साम्प्रदायिक ताण्डव;
ये बना रहे हैं स्वर्गोत्तर
भारत को अति गर्हित रौरव।

क्या सुप्त रहेगी युवाशक्ति
करने को भारत का विनाश ?
या जागरूक होगी सत्वर
लेकर - प्रबुद्धता का प्रकाश ?

चाहिए शक्ति नव औद्योगिक;
चाहिए अमित निर्यात - शक्ति;
क्या नहीं अपेक्षित श्रम अथोर ?
चाहिए अखण्डित देशभक्ति।

पर्याप्त परिश्रम आवश्यक,
करना है यदि ऐसा विकास;
यदि पूर्ण परिश्रम हम न करें,
कृषि क्या देगी फल अनायास।

क्या स्वेद नहीं निज हम देंगे ?
भारत रह जाये परनिर्भर ?
है युवाशक्ति ही कर सकती;
अर्पित चिर जीवनमय निर्झर।

है पर्यावरण नष्ट होता;
नित घोर प्रदूषण बढ़ता है;
मिटती जाती है हरीतिमा,
ऋणभार देश पर चढ़ता है।

जब दृष्टिपात हम करते हैं,
परिदृश्य भयावह दिखता है,
यह अपरिमेय है भीषणता,
अत्यल्प तुच्छ कवि लिखता है।

जागरण - मंत्र देनेवाली
चाहिए लेखनी कल्याणी;
भर दे जो प्राणालोक - पुंज,
ऐसी हो युग - कवि की वाणी।

कुण्ठा - संत्रास रहेंगे क्यों ?
क्यों अस्वच्छता रहे व्यापक ?
साहस, आशा, पौरुष के कवि
हों कर्मयोग के संस्थापक ।

उत्प्रेरक हों कविगण इनके,
भर दें नव रक्त शिराओं में;
विद्युत्गति से बढ़ चलें, अमित
हो तेजस्विता युवाओं में ।

है भला मन्द गति क्या वांछित ?
जब छिड़ा देश में ध्वंसराग;
भैरवी अपेक्षित जब होती,
क्या कविगण गायेंगे विहाग ?

क्या मन्द - मधुर स्वर कर सकता,
जब आवश्यक है सिंहनाद ?
क्या नहीं राष्ट्र हो ऐक्यबद्ध,
जब घातक बन जाये विवाद ?

सहयोग - समन्वय आवश्यक;
अतिशय आवश्यक सहजीवन;
ले बागडोर कर में सम्हाल
उद्बुद्ध राष्ट्र का नवयौवन ।

क्या विस्मृत कर डालें जाग्रत
वह चौहत्तर का आन्दोलन ?
प्रण यह था किया युवाओं ने—
'लायेंगे स्वच्छ - दक्ष शासन ।'

संकल्प यही था किया गया—
हम भ्रष्टाचार मिटायेंगे;
है मूल्य - वृद्धि अतिशय भीषण;
अंकुश अविलम्ब लगायेंगे ।

बेकारी की दानवी घोर
से युवाशक्ति होती अपंग;
सम्यक् शिक्षा जब सुलभ नहीं,
क्या दृष्टिकोण हो नहीं तंग ?'

ये विविध नियंत्रण आवश्यक,
करने अवश्य होंगे सम्भव;
शिक्षा का कर समुचित सुधार,
देना है बल, वैभव, गौरव।

कुछ ही तो कवि लिख पाया है;
हैं कर्मयोग के बिन्दु अमित;
क्यों रहे मनुज शोषित - पीड़ित ?
क्या करें युवागण आतंकित ?

हम कहें क्रान्ति अथवा सुधार;
यह कर्मयोग तो करना है;
वीरता कर्मगत ही वांछित;
भण्डार देश का भरना है।

संस्कृति हो सतत चेतना की;
चाहिए कर्म की नव संस्कृति;
नव संस्कारों से ही होती
है सदा परिष्कृत मनुज - प्रकृति।

इतिहास नया रचना होगा;
रचनी होगी नव परम्परा;
गृहदाह घोर की वेला में
करनी ही होगी हमें त्वरा।

चाहिए चेतना अपरा भी,
चिर परा चेतना संग - संग;
इस द्विविध चेतना के पर से
उड़ता सदैव भारत विहंग।

आलस्य नहीं, मन्दता नहीं,
है सदा अपेक्षित तत्परता;
बूँदों की तत्पर गति से ही
अम्बुधि असीम क्रमशः भरता।

हैं शब्द नहीं पर्याप्त सुलभ;
यों भी मैं मितव्ययी नर हूँ;
मैं सदुपयोग - आग्रही सदा
चल रहा सूक्ष्मता - पथ पर हूँ।

लिख पाया हूँ पर्याप्त नहीं;
पर्याप्त अर्थ समझें युवजन;
यदि पूर्ण प्रेरणा ले पायें
वे, तो सार्थक होगा लेखन।

कर सकता है कोई अपहृत
उनके पावन अधिकार नहीं;
कर सकते सबको भारमुक्त;
होंगे कदापि वे भार नहीं।

मैं उद्‌बोधन दे रहा नहीं;
करता हूँ कुछ लेखन केवल;
चाहता भग्न हों सत्वर ही
जड़ता - निष्क्रियताओं के दल।

कैसे भी कर्म नहीं वांछित,
आवश्यक है, वे हों समुचित;
हों पक्षपात से पूर्ण मुक्त;
कर सकें राष्ट्र को संजीवित।

संरक्षित भी वे करें देश
के कण - कण को औ' जन - जन को;
कर पायें सबल - सफल - विजयी,
मनुजोचित स्वत्वों के रण को।

हो कहीं नहीं अज्ञान - तिमिर;
सर्वत्र ज्ञान का हो प्रसार;
प्रद्योत राष्ट्र नव प्राप्त करे,
चिर हो सुधार, मृत हों विकार।

मारें हम निखिल विकारों को;
जन को क्या करना है विनष्ट ?
दुर्जन कोई न सता पाये,
सज्जन को दे पाये न कष्ट।

यह नहीं स्वप्न ही रह सकता;
कर सकते सब साकार त्वरित;
सारी कुरीतियाँ, कुल कुटेव
सकते सुधार, कर यत्न उचित।

सोचना नहीं है कब करना,
प्रत्येक समय है कर्म - समय;
दुष्कृत्यों को उन्मूलित कर,
दे दें सत्कर्मों का परिचय।

केवल परिचय ही नहीं, वृद्धि
उनकी चिर करते जाना है;
सद्भाव - सुकृत - सन्मतियों से
भारत को भरते जाना है।

●

चतुर्थ सर्ग : सीमान्तक्षेत्र

जो हो स्वतंत्रता - प्राप्त देश,
उसके जनगण हों चिर जाग्रत;
वे चिर सीमा - संरक्षक हों;
हों जागरूक प्रहरी अविरत।

भारत स्वतंत्र सुविशाल देश,
इसकी सीमाएँ हैं व्यापक;
कश्मीर स्वर्ग है वसुधा का;
केसर - सुगन्ध का आपूरक।

ऐसा सौरभ अन्यत्र कहाँ ?
प्राकृतिक छटा इसकी अनुपम;
झीलों की चिर झिलमिल सुषमा;
मुसलिम - हिन्दू में प्रीति चरम।

घाटियाँ मनोरम शान्तिमयी,
हिम - शिखरों की शोभा अपार;
यह भूमि पूर्णतः कलामयी;
है कभी कला में क्या विकार ?

सहयोगपूर्ण सम्पूर्ण राज्य;
मन्दिर - मस्जिद में द्वन्द्व नहीं;
चिर सह - अस्तित्व, समन्वय चिर,
टकराव नहीं है कभी कहीं।

यह स्वर्ग रहा है भारत में;
सर्वदा रहा इतिहास यही;
आजाद हिन्द जब हुआ, पृथक्
होना क्या होता रूप सही ?

यह तो स्वाभाविक है नितान्त,
यह भारत का ही अंग रहे;
जा किसी अन्य के पास भला
क्यों दैन्य, अभाव, विपत्ति सहे ?

उसके भी जनगण अखिल हुए
आजाद, मिल गया लोकतंत्र;
मतदानों में उद्घोष हुआ—
'हमसे अभिन्न भारत स्वतंत्र।'

पर पाकिस्तान चाहता क्या
अक्षुण्ण शान्ति हो भारत में ?
इसकी अखण्डता बनी रहे,
यह बढ़े सबलता के पथ में ?

भारत के प्रति हैं कई राष्ट्र
रखते ईर्ष्या - विद्वेष सतत;
वे कहाँ चाहते हैं भारत
चिर हो समृद्ध, चिर आभा - रत ?

भारत - सीमा पर ही उनको
जड़तामय पाकिस्तान मिला;
सोचा कि उसी को बल देकर,
सकते भारत का मूल हिला।

दे दिये प्रलोभन भी अगणित;
सहयोग और शत आश्वासन;
उसने स्वतंत्रता निज रख दी
बन्धक, पाकर बल - सुविधा - धन।

वह कठपुतला बन गया और
नाचने लगा उनके कर में;
आक्रमण कर दिया भारत पर;
घुस गया पड़ोसी के घर में !

कुछ दिये प्रलोभन युवकों को;
समझा उनको कच्चा धागा;
कुछ ने अवश्य प्रतिरोध किया;
तो कुछ - कुछ निकल गया, भागा ।

तत्काल सजग हो राष्ट्रपिता
ने कहा कि दुश्मन को मारो;
उसपर हो प्रत्याक्रमण त्वरित;
बन सिंह स्यार को ललकारो ।

फिर किया हिन्द ने यह, परन्तु
कुछ भाग लूट भागा था वह;
रिपु की छलना में पड़ा अंश;
क्षति - कष्ट सह रहे हम दुस्सह ।

पर वह दिन आयेगा अवश्य
जब युवा जगेंगे भारत के;
छीनेंगे अपना गया अंश
बनकर दृढ़ सैनिक जय - पथ के ।

जब युवाशक्ति जग जाती है,
क्या होती कभी पराजित है ?
लौटती विजय के बिना नहीं—
जब हो जाती रण - प्रस्थित है ।

आक्रमण अभी भी है जारी,
है प्रत्याक्रमण कहाँ अनुचित ?
यह शीत युद्ध ही नहीं, इसे
करना समाप्त ही है समुचित ।

देवता ? मार के जो होते,
उनसे सुबुद्धि की क्या आशा ?
क्या कभी समझ पाते हैं वे
सद्भाव - शान्ति की नर - भाषा ?

कर प्रत्याक्रमण जयी, उनको
पूरा समझाना पड़ता है;
फिर आत्म - समर्पण करवा कर
कुछ उन्हें रुलाना पड़ता है।

है बँगला देश बना ऐसे;
हमको निजांश ही लेना है;
यदि हैं सन्तति हम भारत की,
कण भी न शत्रु को देना है।

होगा अवश्य ऐसा भविष्य;
निज युवा - शक्ति जब जागेगी;
जब देशभक्ति - कर्त्तव्य - निरत
होगी, जड़ निद्रा त्यागेगी।

है देशभक्ति का निकष यही;
है स्वतंत्रता का यही अर्थ,
अन्यथा जनों के त्याग और
बलिदान रहेंगे पूर्ण व्यर्थ।

जब प्रत्याक्रमण किया हमने,
कितने सैनिक बलिदान हुए;
केवल हमीद ही नहीं, अपितु
अगणित मुसलिम कुर्बान हुए ।

भारत क्या केवल सनातनी ?
मुसलिम - ईसाई का भी हैं;
सिख, जैन, पारसी का भी है;
चिर नाता भाई का भी है।

कश्मीर राज्य भी इसी भाँति
सबका है, सभी बचायेंगे ;
तन - मन - धन से अपनायेंगे ;
उसका सुख - विभव बढ़ायेंगे।

हैं कश्मीरी नागरिक भला
क्या नहीं नागरिक भारत के ?
उनको समान अधिकार सदा,
वे भी चालक भारत - रथ के।

कश्मीरो क्या कायर होंगे ?
वे तो चिर शौर्य - हिमालय हैं,
मुसलिम - हिन्दू भाई - भाई ;
वे मस्जिद और शिवालय हैं।

नागरिक राष्ट्र के दृढ़ सैनिक
हैं, हिन्दू हों अथवा मुसलिम ;
है शान्ति - प्रीति - पथ ही सुखमय ;
सद्भाव - निहित प्राची - पश्चिम।

सहयोग सभी का सुलभ रहे
तो कश्मीरी जन बढ़ जायें,
आजाद कहाँ ? अपहृत है जो
कश्मीर, उसे वापस लायें।

भारत के शिल्पी - कलाकार
कश्मीरी हैं गद्दार नहीं ;
हम नहीं मानते, उनको है
भारत से पूरा प्यार नहीं।

चिर शान्ति - प्रीति - सद्भावों का
भारत में वातावरण रहे,
तो देशभक्ति से पूर्ण सदा
निश्चित उनका आचरण रहे।

क्या छिद्रान्वेषण करना है ?
क्या करना कुछ भी मीनमेष ?
विश्वास परस्पर रखकर ही
अविजेय बना सकते स्वदेश।

चाहे जैसी हो राजनीति;
हो युवाशक्ति की यही नीति;
सब चलें कदम से मिला कदम;
अक्षुण्ण सभी से रहे प्रीति।

वीरत्व, सुदृढ़ संकल्प रहे,
भारत को सभी समपर्ण दें;
हिन्दू, मुसलिम, सिख, ईसाई
मिलने का जीवन - दर्शन दें।

भारत को ही समझें मस्जिद;
सर्वदा इसे मन्दिर समझें;
क्यों कहें विधर्मी उन्हें और
वे क्यों इनको काफिर समझें?

परिवारों में भी भिन्न - भिन्न
हैं धर्म और मजहब सम्भव;
इसमें अखण्ड एकत्व - भाव
अक्षुण्ण रहे तो है गौरव।

व्यापक - विशाल भारत है तो
होगी बाहरी विविधता ही;
आन्तरिक एकता हो अवश्य;
शक्तिदा अखण्ड एकता ही।

यह सामासिक संस्कृति ही तो
है भारतरक्षा की जननी;
अभ्युदय - दायिनी भी है यह;
पूजती इसीसे है अवनी।

यह पथ नमाज - पूजा का हो;
है पन्थ राष्ट्र के जीवन का,
इस एकात्मता - सुरक्षा में
ही बल - पौरुष कुल यौवन का।

यदि ऐसा कर पायेंगे तो
सुख का अभियान सफल होगा;
सबकी उन्नति होगी अवश्य,
सबकी वाणी में बल होगा।

हाँ, तभी सफल होगा अपना
अतिसाधारण भी तूर्यनाद;
यदि कुछ बल भर देंगे उसमें;
दिग्विजयी होगा सिंहनाद।

मृगराजनाद करना होगा;
गजराजों को भी दहला दे;
फर्जी बनकर जो आये हों,
भागें तुरन्त बनकर प्यादे।

हौसला पस्त होगा उनका
यदि प्रत्याक्रमण करें दृढ़ हम;
भारत में है एकता नहीं,
होगा समाप्त उनका यह भ्रम।

होगा अखण्ड फिर से अपना
भारत विशाल, सन्देह नहीं;
आन्तरिक एकता जहाँ अजय,
रहती अजेयता अखिल वहीं।

जब शताब्दियों तक दास रहे
हम, तो भी थे हो गये एक;
साम्राज्य विश्व का जो गुरुतम,
उसने भी घुटने दिये टेक।

अपना बल यह विवेक ही था;
आन्तरिक एकता थी अजेय;
हो गया विश्व - इतिहास चकित;
भारत का यह बल अनुपमेय।

यदि हो ऐसी एकता पुनः,
कण - कण अजेयतामय होगा;
बाँका न बाल होगा कदापि;
छूनेवालों को भय होगा।

उत्तर - दक्षिण का नहीं भेद;
पूरब - पच्छिम का भेद नहीं;
एकत्व - भाव यह सहज - सरल;
हैं जहाँ चाह, है राह वहीं।

हिन्दू के प्रति हो घृणा नहीं;
मुसलिम के प्रति क्या हो नफरत ?
चिर समानता से संरक्षक
सारे फिरकों का है भारत।

क्यों रहें साम्प्रदायिक विवाद ?
क्यों हो कोई फिरकापरस्त ?
भारत - परस्त बन जायें सब,
मिलजुल कर सब जन रहें मस्त।

कोई यदि रिपु हो भारत का,
वह रिपु है, चाहे जो मजहब;
या देश भले कोई भी हो;
हमको है भारत से मतलब।

पीते हैं जल इसका ही हम;
फल - अन्न इसीका खाते हैं;
लेते हैं श्वास पवन इसका;
इससे ही जीवन पाते हैं।

कर्त्तव्य नहीं है क्या मजहब
उसका संरक्षक भी चिर हो ?
है सम्प्रदाय भी, इसके प्रति
कुल निष्ठा अपनी सुस्थिर हो।

बढ़ चलें अभय सीमाओं पर,
इसमें हो रंच विलम्ब नहीं;
चिर अक्षुण्णता राष्ट्र की हो,
इससे बढ़कर अवलम्ब नहीं।

पूरब हो अथवा पच्छिम हो,
दक्षिण हो अथवा हो उत्तर,
रक्षाहित झंझावात चले,
हो युवाशक्ति निज इस पथ पर।

रहने देना है कहीं नहीं
भारत में रिपुओं को पल भर;
बढ़ते जायें भयमुक्त वीर;
क्या युवाशक्ति होगी कातर ?

यह शक्ति हमारी रही सदा
वीरता - अभयता की प्रतिमा;
मरमिट कर भी रखती आई
है भारत की महिमा - गरिमा।

उल्लेख हो चुका है पहले,
नागरिक सभी हैं देशभक्त;
है युवाशक्ति इसमें आगे;
खौलता सभी का अखिल रक्त।

शोणित है सबका एक यहाँ,
उसमें चिर पौरुष की ज्वाला;
एकतापूर्ण अभियान राष्ट्र—
रक्षा का क्या रुकनेवाला ?

अरियों के हेतु गरल घातक
होगा ही कश्मीरी केसर;
भारत के हेतु सुधाधारा
होंगे चिर कश्मीरी निर्झर।

मिल - जुल कर युद्ध करेंगे ही
भारत की रक्षा का डट कर;
चाहे कोई हो आक्रामक,
या महाकाल टूटे सर पर।

होंगे शहीद सौ बार, किन्तु
गद्दार न कभी कहायेंगे;
भारत के कण-कण की रक्षा
मैं हँस - हँस कर मर जायेंगे।

यह मरण नहीं होगा कदापि,
यह तो होगा अमरत्व विरल;
सौभाग्य और गौरव होगा,
होंगे ही विजित सदा रिपुदल।

देखें तो कैसी हैं स्वतंत्र—
स्वच्छन्द वहाँ की सरिताएँ ?
प्रवला हैं वे भी रक्षा में,
जिनको हम कहते अबलाएँ।

अबला कहना है महाभूल,
वे तो भारत की नारी हैं;
वे भी तो हैं ज्वाला प्रचण्ड,
क्या वे दुर्बल चिनगारी हैं ?

किस भाँति प्रवाहित है अदम्य
गतिमयी विपाशा प्रिय सरिता !
जैसे तरंगिणी कल्हण की
हिमगिरि की चिर उन्नत कविता।

करते रहते हैं नमस्कार,
नतमस्तक मेघ वहाँ रहते;
वे गरज - गरज कर, घुमड़ - घुमड़,
कश्मीरी गुण - गरिमा कहते।

झीलों से सुन्दरता लेते
अम्बर के तारे प्रतिबिम्बित,
झलमल - झलमल ज्योतिर्माला,
मृत मन हो जाता संजीवित।

घाटियाँ मनोरम, चीड़ विटप,
अखरोट आदि फल, सेब लाल;
यह पुण्यभूमि देती आई
भारतामाता को मुण्डमाल।

जो स्वतंत्रवा - रक्षक न बनें,
उन मुण्डों का है कहाँ मोल ?
हैं वीर कहाँ करते अपने
मुण्डों का कोई मोलतोल ?

टक्कर लेते चट्टानों से;
छूकर गिरि - शिखर हिला देते;
जो आक्रामक बनकर आता,
रज में हैं उसे मिला देते।

जो गिरि - कन्याएँ सुन्दरियाँ
गाती रहतीं हैं मधुर गान,
वे भी रणचण्डी बन जातीं,
भारत को देतीं प्राणदान।

क्या जीना ही होगा जीना —
कायरता का लेकर कलंक ?
उससे तो लड़ मरना अच्छा
भारत - नभ का बन रवि - मयंक।

है शौर्य जहाँ, अमरत्व वहाँ;
वह क्षेत्र पूज्य बलिदान जहाँ;
गृह में भी मरना ही होगा,
हम क्यों न मरें अभिमान जहाँ ?

बढ़ चलें वीर, दे रही स्वयं
है धरती केसरिया बाना;
अमरत्व - दीप है वहीं जला,
अन्यत्र रुके क्यों परवाना ?

जिनको भटकाते शत्रु, उन्हें
भी संग - संग लेना होगा;
समझाना होगा उन्हें, हृदय
का प्यार उन्हें देना होगा।

है शक्ति घृणा में कभी नहीं;
वह सदा प्यार में ही रहती,
'दीवानी मधुर प्रेम की हम,'
चट्टानी सरिताएँ कहतीं।

कहना है क्या वीरो! विशेष ?
कर्त्तव्य - मार्ग पर बढ़ना है;
भारत - रिपुओं से लड़ना है;
अमरत्व - शिखर पर चढ़ना है।

है नहीं पराजय इस रण में;
नव विजय - गर्व ही पाना है;
भारत के स्वतंत्रता - ध्वज को
चिर शिखरों पर लहराना है।

रण - जीवन को अपनाकर ही
जीवन को धन्य बना सकते;
कर भारत - स्वतंत्रता अक्षय
चिर होली - ईद मना सकते।

बढ़ चलें युवक - दल पंजाबी,
जय बन्दा, गुरुगोविन्द कहें;
क्यों पाकिस्तानी स्यार बनें ?
वे भारत के रणसिंह रहें।

जो जन्मभूमि गुरु नानक की,
वह फिर भारत की हो जाये;
यह दिवास्वप्न साकार करें,
वीरत्व कदापि न सो जाये।

यह कवि है अस्सी के समीप;
हड्डियाँ हुई हैं चूर - चूर;
है कुँअर सिंह का शौर्य स्मरण;
जर्जर होते हैं नहीं शूर।

तो तरुण भला समरांगण के
पथ में कदापि हैं रुक सकते?
लेंगे जय या गति वीरों की;
अरि के आगे क्या झुक सकते?

तो बजें नगाड़े या न बजें,
रण होता नहीं नगाड़ों का;
अब तो चुपचाप कूच होता,
होता अभियान पहाड़ों का।

हैं बुला रहे हिम - शृंग तुम्हें,
'हे युवावर्ग! दौड़े आओ;
हैं विजय और अमरत्व यहाँ;
कर शत्रु - विजय, गौरव पाओ।'

मैदानों में क्या गौरव है?
गौरव तो है हिमवानों पर;
भारत - रक्षा के रण सदैव
होते आये चट्टानों पर।

अरियों के चरण अपावन हैं,
पावन हिमशैल कहाँ सहता?
सहता क्या उनके पदाक्रमण
कश्मीर अगर जाग्रत रहता?

पर जागरूक अब रहे सतत;
सिगड़ी में हो रण की ज्वाला,
जो भस्मसात् कर दे रिपु को,
कर डाले उनका मुँह काला।

पावन अस्मत की रक्षा में
सुन्दरियाँ ज्वाला बन जायें,
मिल पाये अरि को कब्र नहीं;
तब विजय - गीत मधुमय गायें।

था स्वतंत्रता का आगम ही,
जब घुस आये पाकिस्तानी;
आये बिल्कुल धोखे से वे;
थे दस्यु, बहुत की शैतानी।

वे गये भगाये, किन्तु लूट
कुछ भूमि हमारी चले गये;
अब भी तो हम सम्हलें अवश्य;
उस समय भले थे छले गये।

धोखे से ही तो किया गया
अरुणाचल पर आक्रमय घोर;
फिर मुक्त हुआ, पर चूक हुई
कुछ भूमि रह गई उसी ओर।

वह सैंतालीस और बासठ
की चूक मिटा देनी होगी;
सम्पूर्ण हिमालय - प्रांगण की
धरती वापस लेनी होगी।

●

पंचम सर्ग :

पंचनद-लोहित-नमन

पंचनद-वीरत्व, भारतभक्ति को शत-शत नमन है;
लाजपत जी, भगत जी के वंद्य चिर पावन चरण हैं।
स्मरण है रोमांचदा वह बाग जलियाँ की कहानी;
देशभक्तों ने बहाया रक्त निज, कह उसे पानी।

देशभक्ति स्वतंत्रता-रण में रहा यह राज्य अनुपम;
है नहीं संभव बताना, था महत् बलिदान का क्रम।
क्या कभी पजाब अपना गर्व वह धूमिल करेगा?
सर्वदा ही क्या नहीं वैसा विरल इतिहास देगा?

एक और अखण्ड भारत वह रखेगा प्राण देकर;
चिर प्रवाहित ही रहेगा अप्रतिम वह ज्योति-निर्झर।
मानता हूँ, कुछ समय से तिमिरमय कुछ घन घिरे हैं,
कुछ तरुण भटके हुए हैं, गर्त्त में तम के गिरे हैं।

पार्श्व के रिपु ने वहाँ है जाल कुछ अपना बढ़ाया;
फँस गये उस जाल में कुछ, शत्रु था कुछ लोभ लाया।
है सदा इस भाँति ही तो वधक पक्षी को फँसाता;
और मछियारा, लगा चारा, मछलियाँ पकड़ पाता।

व्यक्तिगत कारण रहे कुछ और थे व्यापक प्रलोभन;
था अभी मस्तिष्क दुर्बल, दिख पड़े कामिनी-कंचन।
वे हुए अपहृत, पड़ा करना उन्हें कुछ मद्यसेवन;
कर दिया पथभ्रष्ट देशद्रोह का देकर प्रशिक्षण।

अस्त्र-शस्त्र अपार ले लो, मारने को बम बनाओ;
मूल्य ले लो पूर्ण, खालिस्तान का नारा लगाओ,
नाम खालिस्तान, पाकिस्तान का वह भाग होगा;
मातृ भारतभूमि के हित वह भयंकर नाग होगा।

हो गया प्रत्यक्ष पहले हो, हुए संहार भीषण;
घोर हत्याएँ हुईं निज बन्धुओं की ही अकारण।
लाज माँ-बहनें भला इस दौर में कैसे बचातीं ?
हो गईं बलिदान कितनी ही, भला क्या त्राण पातीं ?

हत हुए बच्चे, गँवाये यात्रियों ने प्राण औ' धन;
रेल-बस को लूट कर भी हो गये कुल कलुष भीषण।
लेखनी भी सिहर जाती, घोरतम लज्जा सतातीं;
क्या भला लिखना सभी कुछ ? चाहकर भी लिख न पाती।

देश के स्वातंत्र्य का उद्घोष प्रथम हुआ जहाँ था,
क्या यही अध्याय काला शेष लिखने को वहाँ था ?
राष्ट्र के ही रक्त से नदियाँ हुई रंजित, कलंकित;
जल नहीं हो शेष जैसे, हो गया यह रूप गर्हित।

हाय रे ! पंजाब का क्या रुधिर से ही स्नान होगा ?
शेष जीवन कुछ न होगा, लिखित नाश-विधान होगा ?
नृत्य होगा ध्वंस का ही, लूट-हत्याकाण्ड-ताण्डव ?
भूमि स्वर्गोत्तर त्रिवश हो, झेलती वीभत्स रौरव।

है बड़ा दायित्व इसका, पास पाकिस्तान है जब;
प्रबलतम प्रहरो यही है भूमि भारत का सदा तब।
देव नानक, वीर गुरु गोविन्द की यह भूमि पावन;
क्या बनेगी दासता का यह अपावन-घृणित कारण?

यह नहीं संभव, सम्हलना है इसे कुछ समय पाकर;
क्या मिलेगा लाभ निज इतिहास गरिमा का गँवाकर?
भाँति जिस यह लड़ सका था युद्ध राष्ट्र-स्वतंत्रता का,
कर सकेगा सफल रण एकत्व और अखण्डता का।

भूल जो जिससे हुई उसको भुलाना ही पड़ेगा;
घाव पर पंजाब के मरहम लगाना ही पड़ेगा।
भैरवी गाकर पुनः इस राज्य को होगा जगाना;
प्रेम से, सहयोग से होगा नया निर्माण लाना।

यह करेगा ही अखिल निज राष्ट्र-सीमाएँ सुरक्षित;
भूमि जो स्वाधीनता के पूर्व थी, हो पुनः अर्जित।
क्या भला समतल रहेगा हिन्द का इस भाँति खण्डित?
है नहीं कश्मीर ही निज, मानसर भी है सुपरिचित।

जागरण की देर है, जब पंचनद फिर से जगेगा;
है नहीं सन्देह, भारत को पुनः यह त्राण देगा।
यह नये निर्माण, एकीकरण का शुभ रण करेगा;
रुधिर निज बहने न देगा, पूर्ण शाश्वत प्रण करेगा।

प्राण-शोणित राष्ट्र की मृतवत् शिराओं में भरेगा;
पुनः गरिमा - मनुजता - अभिमान भर सर्वत्र देगा;
है महासागर हमारा हिन्द नामक, मुक्ति - अम्बुधि;
चाहिए चिर क्या नहीं रखनी हमें उस बिन्दु की सुधि?

था कहा उस बिन्दु से ही तो, 'नहीं कण भी डरो तुम;
देश को उन्मुक्त कर दो, मुक्तिरण करते मरो तुम।
सच, यही संदेश अन्तिम पूज्य बापू ने दिया था;
लड़ सके वे सब, जिन्होंने दूध माता का पिया था।

देखना है, पंचनद निज रुधिरनद ही बन न जाये;
विगत की भूलें कभी निज पुनः अब होने न पायें।
हिन्द - रक्षा में सदा निज पंचनद आगे रहेगा;
हाँ, नहीं आतंक से शोणित स्वदेशी फिर बहेगा।

भूमि कृषि - उद्योग की यह, सतत नवनिर्माण की है;
सर्वदा अभियान की, कल्याण की, बलिदान की है।
चाहिए ही क्या नहीं इस भूमि का कण-कण बचाना ?
सतत कुल सहयोग देकर प्रगति से मण्डित बनाना ?

देवमन्दिर और गुरुद्वारे न रखते भेद कोई;
क्यों भला टकराव होगा ? क्यों रहेगी भूमि सोई ?
एकता - सहयोग से इतिहास गरिमामय बनेगा;
हिन्द की अक्षुण्णता से सतत आनन्दोत्सव मनेगा।

सब चलें इस पंथ पर, सब हों सुखी, आनन्दमय हों;
है सभी की चिर विजय, यदि राष्ट्र भारत की विजय हो।
निखिल वन्दन पंचनद की भूमि पावन को समर्पित;
देशभक्त महान् चिर बलवीर जनगण को समर्पित।

चाहता है कवि, करे यह भूमि भारत की विजय चिर;
शौर्य से करती रहे निज राष्ट्र को रक्षित, अभय चिर।
पांचजन्य सदैव अपना राष्ट्र - सीमा पर बजाये;
अनवरत 'जय हिन्द' का उद्घोष वसुधा को सुनाये।

●

असम के नदरत्न लोहित को नमन अर्पित हमारा;
अखिल भारत का रहा है, ब्रह्मपुत्र सदैव प्यारा।
राज्य की स्थिति को विषम यह नद कभी होने न देता;
शान्ति-समता हेतु मानव है यहाँ आलोक लेता।

किन्तु क्यों होने लगी है स्थिति विषम इस क्षेत्र की भी ?
ज्योति क्यों होने लगी है मन्द भारत-नेत्र की भी ?
मानता हूँ, कुछ समस्याएँ यहाँ होंगी समुत्थित;
समाधान अवश्य सम्भव, चाहिए पर शान्ति समुचित।

शान्ति से ही तो निरन्तर मनुज की होती प्रगति है;
क्या न घोर अशान्ति से होती प्रगति की मन्द गति है ?
असम या कि अहोम हो यह, शब्द से अन्तर न होता;
एक रहती भूमि, जो भी बीज क्रमशः कृषक बोता।

चाहिए अक्षुण्ण रहना, क्या भला होना विखण्डित ?
क्या न विघटनवाद से लघुतर बनेगा और सीमित ?
किन्तु विघटनवाद की इस देश में आँधी चली है;
लग रहा है, वाह्य रिपु की दाल कुछ इसमें गली है ?

चाहते हैं शत्रु, भारत लघु बने, जिससे अबल हो;
प्रबल यह रहने न पाये, लक्ष्य यह उनका सफल हो।
एकता का सूत्र सबल सदैव क्या वांछित नहीं है?
क्या सदा बिखराव से होता मनुज पीड़ित नहीं है?

क्या कभी पार्थक्य का परिणाम हो पाता सुखद है?
सर्वदैव अखण्डता का रूप ही आनन्द - प्रद है।
पूर्व हो, पश्चिम कि दक्षिण, या रहे सीमान्त उत्तर;
एकता से, शान्ति से ही तो बनेगा राष्ट्र दृढ़तर।

राष्ट्र हो या राज्य, वांछित है सभी में भावना यह;
अन्यथा सर्वत्र होगा लोकजीवन - भार दुर्वह,
यह कला का राज्य अविरत एकता की ही कला दे;
भेद के उन्माद को यह इस कला से ही जला दे।

दे सके लोहित सदा ही राष्ट्र को यह प्रेम-धारा;
असम को चिर हो सुलभ एकत्व का ऐश्वर्य सारा।
क्या न शंकर देव, माधव देव की गरिमा रहेगी?
वेत्रवन की सुदृढ़ता तुमको नहीं क्या शक्ति देगी?

जागरण के शंख भारत में रहे हो तुम बजाते;
बाल रवि को हो तुम्हीं तो गीत जागृति के सुनाते।
पूर्व भारत के सबल प्रहरी! रहो जाग्रत निरन्तर;
राष्ट्र की दृढ़ एकता का दो दिखा आलोक - निर्झर।

शत्रु भारत में नहीं क्या पूर्व - उत्तर मार्ग लेंगे?
राष्ट्र - सीमाएँ निखिल क्या हम नहीं रक्षित करेंगे?
देशभक्ति, प्रवीरता के रूप रचती हैं कलाएँ;
क्या नहीं हरती रहेंगी राष्ट्र की सारी बलाएँ?

वेणु-वन हो, काष्ठ दृढ़ हो, राष्ट्र के गजदन्त हो तुम;
हो सुकोमलतम जगत् में, अजय वन-बलवन्त हो तुम।
उच्च नद-गजराज हो तो क्या नहीं मृगराज भी हो?
जानता है विश्व, तुम हो तैल भी, धनराज भी हो।

दृष्टि तुमपर भी निरन्तर देश के रिपु हैं गड़ाते;
और अपना जाल मायावी अनवरत हैं बढ़ाते।
यदि नहीं तुम एक रहते, क्या नहीं दुर्बल बनोगे?
और देश विशाल को भी अबल ही तो तुम करोगे।

सबलता के पुंज ! भारत-वीर सैनिक, क्या डरो तुम ?
जागरूक सदैव प्रहरी, शंख-ध्वनि अविरत करो तुम ।
एकतामय नृत्य दो, चिर एकता गाते रहो तुम;
राष्ट्र में ऐश्वर्य, शक्ति, अभेद्यता लाते रहो तुम ।

एकतामय तुम रहो तो राष्ट्र चिर निर्मल रहेगा;
सर्वदा इस जागरण से सुलभ अरुणोदय रहेगा;
देशभक्ति - अजेयता संदेश चिर विजयी बनेगा;
राष्ट्रवाणी को निरन्तर स्वर तुम्हारा शक्ति देगा ।

षष्ठ सर्ग : उपसंहार

कह गया संक्षेप में ही,
क्योंकि स्वयं प्रबुद्ध हो तुम;
संग इसके, मानता हूँ,
हृदय रखते शुद्ध हो तुम ।

यदि लिखा हो कुछ अधिक तो
युवाजनगण ! क्षमा करना;
अल्प यदि हो ज्योति अंकित,
अधिकतम आलोक भरना ।

मानता हूँ, तुम सदा
संभावना रखते अपरिमित;
सतत रखते अमित ऊर्जा,
कर्मबल है पूर्ण संचित।

है सदा शुभकामना,
'तुमको मिले दीर्घायु जीवन;
पूर्ण हो आरोग्य - सम्बल;
हो नहीं व्यवधान - बन्धन।

अनवरत कर्त्तव्य - पालन
तो सभी से है अपेक्षित;
चाहता हूँ मैं, नहीं
तुमको करे कोई उपेक्षित।

राष्ट्र की नवशक्ति हो तुम;
कर्मबल निर्माणमय है;
उच्चतम नवकल्पनाओं
का निरन्तर अभ्युदय है।

कल्पना की उच्चता का
निकष जनकल्याण हो है;
कर्मपरिणति हेतु वांछित
क्या नहीं अभियान ही है?

पूर्ण निष्ठा से किये
अभियान में चिर अमित बल है;
बंजरों में भी इसीसे
सुलभ होते अन्न - फल हैं।

हो मलिनता - कीच यदि तो
चाहिए उसको मिटाना;
मार्ग में हों शूल जो भी,
सुमन ही वांछित खिलाना।

तिमिर या अवरोध जो हो,
ज्योति में परिणत करोगे;
प्राप्त कर प्रज्ञान चिर
आलोक भारत में भरोगे।

स्वहित का भी ध्यान तो,
मैं मानता रखना पड़ेगा;
राष्ट्र और समाज का हित
प्राथमिकतामय रहेगा।

रूढ़ियों में मैं नहीं हूँ,
क्यों भला उनमें रहो तुम ?
हाँ, अनृत को, अनय को
क्षण भर कदापि नहीं सहो तुम।

सत्य का, नय का सदा ही
नाम युवजीवन रहेगा;
स्वच्छतामय, दक्षतामय
ही युवाचिन्तन रहेगा।

प्रथम अर्जन अर्हता का
परम आवश्यक रहेगा;
हाँ, तभी तो योग्य युवजन
राष्ट्र निज तुमको कहेगा।

यदि नहीं कोई कहे पर
योग्यता की प्रथमता है;
न्यास है जीवनशिला का,
सत्य यह सबको पता है।

मूल साधन हों नहीं यदि
शुद्ध, क्या सम्यक् बनेगा ?
हो नहीं उल्लास मन में
तो कहाँ उत्सव मनेगा ?

बात सीधी कह रहा हूँ,
इसे तुम भी जानते हो;
दृष्टि रखते प्रबलतर तुम;
सत् - असत् पहचानते हो।

किन्तु निज कर्त्तव्य अभि—
भावक निभाना चाहते हैं;
है न ऐसी बात, वे
तुमको सिखाना चाहते हैं।

चार दिन ही तो रहेंगे
विश्व में वे अतिथि बनकर;
किन्तु जीवन तो तुम्हारा
दीर्घतर है और भास्वर।

क्या नहीं व्यायाम नियमित
कर, सबल तन को करोगे ?
क्या नहीं अभियान का,
निर्माण का आलोक दोगे ?

जो मिला है राष्ट्र तुमको,
है उसे करना सबलतर;
ऐक्य और अखण्डता का
है नहीं क्या ध्येय सुखकर ?

सुख इन्हीं में तो निहित है;
क्या निहित है जातियों में ?
वर - वधू सम्यक् रहें, क्या
सुख कदापि बरातियों में ?

सम्प्रदायों और फिरकों
में भला क्या बद्ध रहना ?
चाहिए क्या अनय करना ?
या किसी का अनय सहना ?

पक्षपातों से नहीं क्या
दृष्टि होती मन्द सबकी ?
यह प्रथा संकीर्णता की
हो चुकी है व्यर्थ कब की ?

मनुज - समता - मार्ग से ही
जन सभी आगे बढ़ेंगे;
अभ्युदय - गिरि पर सदा
सहयोग से ही तो चढ़ेंगे !

है कठिन यात्रा, कठिन
व्यापक महादायित्व अपना;
कर दिया साकार इसने
राष्ट्र का स्वातंत्र्य - सपना।

डेढ़ चावल की भला
खिचड़ी कभी क्या पक सकेगी ?
कुछ घरों को ज्योति क्या
दीपावली की ज्योति देगी ?

क्या नहीं होली सभी की ?
ईद सबकी ही रहेगी ?
यदि रहेंगे हम विखण्डित,
क्या भला दुनिया कहेगी ?

चाहिए ही क्या नहीं
सम भाव की व्यापक इयत्ता ?
यदि नहीं सद्भावना हो,
क्या रहेगी लोक - सत्ता ?

कर्म हैं अपने अपेक्षित
राष्ट्रहित - अनुकूल ही तो;
हैं सदा माला बनाते
वाटिका के फूल ही तो।

राष्ट्र भी उद्यान ही है;
सुमन कर्मों के लगायें;
पुष्पवत् कर्त्तव्य अपने
राष्ट्र - प्रतिमा पर चढ़ायें।

देश के उद्यान की अभिवृद्धि
अपनी अर्चना हो;
यह नमाज अजान अभिनव;
शबद-कीर्त्तन, प्रार्थना हो।

मनुजता संस्कृति - शिखा है,
शिखर पर इसको बढ़ायें;
रहितपुच्छ - विषाण पशु क्यों ?
सतत नरता - ज्योति लायें।

क्या किसी संकीर्णता में
शुद्ध संस्कृति बद्ध होती ?
क्या नहीं चिर जागती वह ?
एक पल भी तो न सोती।

ज्योति, सुरभि, मनुष्यता का
क्षेत्र निखिल दिगन्त होता;
क्या कहीं भी वाटिका—
सीमित - निबद्ध वसन्त होता ?

ला सकें वह पुष्प - ऋतु हम,
जो हँसा दे राष्ट्र सारा;
और जन - जन में प्रवाहित
ही रहे चिर प्राणधारा।

कल्पना - कलिका सुमुकुलित
हो, सुमन - आकार भर दें;
स्वप्न जो भारत भुवन के,
हम उन्हें साकार कर दें।

सतत निज सत्कर्म की
धारा बढ़ाते ही चलें हम;
पूर्णतामय हों चतुर्धन—
अखिल वाक्, चरित्र, कृति, श्रम।